तेल का खेल अभी और चलेगा

हमारे लिए मुश्किलें खत्म नहीं होने वालीं, क्योंकि तेल के अंतरराष्ट्रीय मूल्यों को प्रभावित करने की भारत की क्षमता फिलहाल नगण्य है।

सौरभ चंद्र
पूर्व पेट्रोलियम सचिव

तेल विश्व की राजनीति को सबसे ज्यादा प्रभावित करने वाली वस्तु है। इसकी वजहें भी हैं। तेल अर्थव्यवस्था के लिए जरूरी है, इसका अपना सैन्य महत्व है और कुछ इलाकों में ही इसके भंडार सिमटे हैं। यह अनुमान लगाना मुश्किल है कि आने वाले दिनों में तेल की कीमतें कितनी होंगी? क्योंकि तेल की दुनिया में अनिश्चितता ही निश्चित है। भू-राजनीति और भू-अर्थव्यवस्था में तेल का अव्वल स्थान है। इसका सामरिक महत्व भी है। यह अपने बूते पर दुनिया के तमाम देशों की अर्थव्यवस्था, भू-राजनीति और आंतरिक राजनीति में उथल-पुथल मचा सकता है। फ्रांस के दंगे इसके ताजा उदाहरण हैं।

चित्रांकन : डी. श्रीनिवास

फ्रांस की सरकार ने पेट्रोल और डीजल पर अतिरिक्त कर लगाकर इनकी कीमतें बढ़ा दीं। महंगाई के कारण जीवन-यापन में आ रही मुश्किलों से वैसे ही वहां हर कोई जूझ रहा था। सरकार के कदम ने इस आग में घी डालने का काम किया। परिवहन व्यवस्था मुख्यतः तेल पर आधारित है और वहां इलेक्ट्रिक गाड़ियों की संख्या भी नगण्य है, इसलिए लोग पेट्रो-पदार्थों में हुई मूल्य-वृद्धि के खिलाफ सड़कों पर उतर आए। स्थिति को नियंत्रित करने के लिए प्रशासन को बल-प्रयोग करना पड़ा। मौत, गिरफ्तारियों और घायलों का सिलसिला शुरू हो गया। जाहिर तौर पर, इससे राष्ट्रपति मैक्रों की साख और लोकप्रियता में भी गिरावट आई है।

फ्रांस सरकार की मानें, तो यह सब वैश्विक तापमान और जलवायु परिवर्तन पर अंकुश लगाने के उद्देश्य से किया गया था। सरकार की सोच थी कि जीवाश्म ईंधन के उपयोग में कमी लाकर कार्बन फुटप्रिंट को कम किया जा सकता है। मगर जनता की नजर में बढ़ी कीमतों का नुकसान वास्तविक है और यह वर्तमान में उन्हें प्रभावित कर रहा है, जबकि वादा भविष्य का किया गया है, जो अभी संभावना मात्र है। नजरिये के इसी अंतर ने लोगों को सड़कों पर उतरने को मजबूर किया।

इतिहास से सबक लेना बुद्धिमानी मानी जाती है। अतीत के अनुभवों का हमें लाभ लेना ही चाहिए। साल 1979 में इस्लामी क्रांति के बाद ईरान में तेल के दामों में भारी उछाल आया था। चूंकि तेल का दाम वैश्विक होता है, इसलिए इसका प्रभाव विश्व के तमाम देशों के पेट्रोल और डीजल के खुदरा मूल्यों पर पड़ा। अमेरिका भी इससे अछूता नहीं रह सका। 1980 के राष्ट्रपति चुनाव में तत्कालीन राष्ट्रपति जिमी कार्टर को जिस हार का सामना करना पड़ा, उसका बड़ा कारण पेट्रोल पंपों पर लगी लंबी-लंबी कतारें और पेट्रोल व डीजल के मूल्यों में वृद्धि को भी माना जाता है।

ईरान संकट के दौरान राष्ट्रपति कार्टर ने तेल के महत्व को देखते हुए 'कार्टर डॉक्ट्रिन' की घोषणा की थी। यह आने वाले दशकों में पश्चिम एशिया में अमेरिकी-रणनीति की बुनियाद बनी। इस डॉक्ट्रिन के तहत अमेरिका ने घोषणा की कि वह पश्चिम एशिया में अपने सामरिक हितों की रक्षा के लिए बल प्रयोग का विकल्प अपना सकता है। आने वाले दशकों में अमेरिका ने कई बार ऐसा किया भी। खाड़ी युद्ध और इराक पर सैन्य हमला इसके उदाहरण हैं। जिमी कार्टर के बाद अमेरिकी राष्ट्रपति बने रोनाल्ड रेगन ने भी इस 'डॉक्ट्रिन' को आगे बढ़ाते हुए सऊदी अरब की सुरक्षा के लिए सैन्य हस्तक्षेप करने की घोषणा की। इसके पहले 1976 में अमेरिका और सऊदी घराने के बीच इसी प्रकार का एक समझौता हुआ था, जिसने 'पेट्रो-डॉलर्स' को जन्म दिया था।

अभी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप द्वारा ट्विटर के माध्यम से सऊदी अरब पर दबाव बनाकर तेल के दाम को संतुलित व नियंत्रित रखने के प्रयास को इसी परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिए। पेट्रो-पदार्थों के दामों को नियंत्रित रखना राष्ट्रपति ट्रंप की घरेलू राजनीतिक मजबूरी है। तेल के दाम में अप्रत्याशित तेजी को रोकने के लिए जरूरी है कि सऊदी अरब का उत्पादन लगातार बना तो रहे ही, साथ-साथ प्रतिबंध की वजह से ईरान द्वारा निर्यात किए जा रहे तेल की मात्रा में आई कमी की भरपाई भी वह करे। पत्रकार जमाल खाशोगी की हत्या के बाद घटे घटनाक्रम ने भी राष्ट्रपति ट्रंप के हाथों को मजबूत किया है। सऊदी अरब 'ओपेक प्लस' यानी ओपेक देश व रूस के उत्पादन में कमी या सीमित रखकर तेल के दाम में वृद्धि करने में जुटा है। यह उसकी आर्थिक मजबूरी भी है, क्योंकि उसके बजट में अनुमानित राजस्व के लक्ष्य को पाने के लिए तेल का मूल्य लगभग 80 डॉलर प्रति बैरल होना चाहिए। फ्रांस के आंदोलन को देखते हुए संभावना है कि राष्ट्रपति ट्रंप तेल के दाम को एक निर्धारित दायरे में रखने के लिए और कारगर कार्रवाई कर सकते हैं।

बहरहाल, भू-राजनीति और भू-अर्थशास्त्र के कारण आने वाले समय में तेल के दामों में अस्थिरता के बने रहने की आशंका है। ओपेक प्लस द्वारा उत्पादन-स्तर को बनाए रखना या इसमें कटौती का फैसला ओपेक की कल यानी 6 दिसंबर को होने वाली बैठक में लिया जाएगा। ईरान पर अमेरिकी प्रतिबंध से छूट की छह माह की समय-सीमा भी मई महीने की शुरुआत में खत्म हो जाएगी। इस प्रतिबंध से पहले ईरान 20 लाख बैरल से अधिक तेल का निर्यात कर रहा था। जाहिर है, ओपेक प्लस के फैसलों का सीधा प्रभाव तेल की वैश्विक कीमतों पर पड़ेगा।

भारत इन तमाम घटनाक्रमों से सीधा-सीधा प्रभावित होगा। पिछले कुछ महीनों में देश में तेल के बढ़ते दामों से स्थिति चुनौतीपूर्ण हो गई थी। हालांकि अभी तेल की कीमतों में गिरावट से लोगों को राहत मिली है। लेकिन तेल के अंतरराष्ट्रीय मूल्यों को प्रभावित करने की भारत की क्षमता फिलहाल नगण्य है। ऐसे में, हमारी यही अपेक्षा होगी कि ओपेक प्लस विश्व अर्थव्यवस्था पर तेल के मूल्यों के दूरगामी असर को ध्यान में रखकर एक संतुलित फैसला ले। खासकर, जब इन सब फैसलों का असर लोकसभा चुनावों पर पड़ सकता है, तो जरूरी यह भी है कि इस अवधि के दौरान केंद्र सरकार जो भी फैसला करे, वह घरेलू अर्थव्यवस्था की स्थिरता और राजकोषीय घाटे को निर्धारित सीमा में रखने के दृढ़ संकल्प के साथ लिया जाए। क्या ऐसा हो सकेगा?

(ये लेखक के अपने विचार हैं)